SJIF Impact Factor - 5.54

E- ISSN 2582-5429

AKSHARA

Multidisciplinary Research Journal

Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal

April - June 2021 Vol.02 Issue VI

Save Tree Save Life

Chief Editor : Dr. Girish S. Koli, AMRJ

For Details Visit To - www.aimrj.com

Akshara Publication

ISSN 2582-5429
AMRJ
Akshara Multidisciplinary Research Journal
Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
April-June 2021 Vol.02 Issue VI SJIF Impact- 5.54

Index

English

Sr.No	Title of the Paper	Author's Name	Page No.
01	The Cultural and Mythological Commonality of Ancient Indians and Iranians (on the example of Avesta and Rig-veda)	Dr. Shirin Jalilova	07
02	Concept of Ideology and the End of Ideology	Dr. Sarika Dubey	13
03	Morphological And Typological Peculiarities Of Numerals In Indo-Aryan Languages	Dr. Sirojiddin S. Nurmatov	19
04	Effect of Flood on Ph & Electrical Counductivity (Ec) of Sugarcane Soil And Its Role In Cyanobacterial Abundance & Diversity in Sugarcane Soil of Shirol Tahasil of Kolhapur (M.S., India)	Mr.Vijay B. Shirolkar D. S. Suryawanshi	22
05	Association between Parent Child Relationship and Self-confidence in Class VIII Students of English Medium Schools	Smt. Reeta Choubey Dr. Sangeeta Shroff	28
06	Analysis the Social and Political Status of Tribal's in Dhule and Nandurbar District	Dr. Nikam Raju Parbhat	31
07	The Role of Agro-tourism in Rural Transformation	Dr. Tilekar Sharad Balasaheb	36
08	Skill Based Education & Personality Development	Dr. Landage Nana. N.	39
09	An Evaluative Study on Fund Allocation & Utilization under *Sansad Adarsh Gram Yojnaa* (a case study of Tikargarhi village of District Unnao, UP)	Mr. Anil kumar	42

हिंदी विभाग

Sr.No	Title of the Paper	Author's Name	Page No.
10	जिंदगीनामा : सांस्कृतिक परिवेश का आख्यान	फरीदा खातून	51
11	जयशंकर प्रसाद के नाटकों में राष्ट्रीय चेतना	सपना रानी व सुनील कुमार	55
12	कोविड-19 और पर्यटन	डॉ. (श्रीमति) पप्पी चैहान	58
13	नागार्जुन के उपन्यास में व्यक्त नारी जीवन	डॉ. पूनम त्रिवेदी	62
14	भारत में संसदीय कार्यवाही और व्यवधान	खेमराज चन्द्राकर डॉ. शीलभद्र कुमार	65

ISSN 2582-5429
AMRJ
Akshara Multidisciplinary Research Journal
Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
April-June 2021 Vol.02 Issue VI SJIF Impact- 5.54

10

जिंदगीनामा : सांस्कृतिक परिवेश का आख्यान

फरीदा खातून
असिस्टेंट प्रोफेसर
पंचकोट महाविद्यालय पुरुलिया, पश्चिम बंगाल
Mob.No. 8777488098

शोध सार

प्रस्तुत आलेख में कृष्णा सोबती के लोकप्रिय उपन्यास 'जिंदगीनामा' में निहित जीवन दृष्टि पर विचार किया गया है। लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास में अविभाजित पंजाब की गंगा जमुना संस्कृति एवं मानवीय जिजीविषा प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत किया है।

बीज शब्द : त्रिंजन, लोहड़ी, हीर-रांझा, पैरीपौना, रंगरेजना।

कृष्णा सोबती जीवन-रचना व विशेषत: कथा-साहित्य की एक विख्यात लेखिका हैं। उनकी अबतक प्रकाशित सभी रचनाओं में 'जिंदगीनामा' उपन्यास आकार में भी अन्य सभी रचनाओं से बड़ा है और महत्व में भी। एक तरह से 1979 में प्रकाशित इस उपन्यास को लेखिका का मैग्नस ओपम भी कह सकते हैं। साढ़े तीन सौ पृष्ठों से अधिक आकार की इस वृहत्तम रचना का पहला भाग 'जिंदा रुख' ही प्रकाशित हुआ है जबकि उपन्यास के दूसरे भाग का एक अंश मात्र 'बहुवचन' पत्रिका के प्रवेशांक में लगभग बीस वर्षों बाद 1999 में छपा है। 'जिंदगीनामा' कृष्णा सोबती का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपन्यास है। यह उपन्यास बीसवीं सदी के हिंदी उपन्यास साहित्य की भी बड़ी उपलब्धि है। 'जिंदगीनामा' में विभाजनपूर्व पंजाब के जन-जीवन और संस्कृति का अद्भुत पुन: सृजन किया गया है। पंजाबी लोकमानस की इसी बहती सांस्कृतिक भागीरथी को लेखिका ने उपन्यास के अंग-रूप में कथारंभ से पहले पूरे साढ़े सात पृष्ठ की काव्यात्मक अभिव्यक्ति में बाँध कर प्रस्तुत किया है। इसमें चनाब और झेलम की धरती के, पंजाब की खिलंदड़ी हीरों के, मेहनती किसानों के, बैसाखी, लोहड़ी आदि त्योहारों के, बाग-खेतों के, पंच दरियाओं के पंजाब के खूबसूरत चित्र खींचकर इसके इतिहास की सबसे बड़ी और भयानकतम त्रासदी, इसके संस्कृति-स्रोत, 'जिंदगीनामा' को 1947 के विभाजन द्वारा काटे जाने का चित्र प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में कृष्णा सोबती की इस काव्यात्मक अभिव्यक्ति में भी 'जिंदगीनामा' रूपी समुद्र 'गागर में सागर' की तरह समाया हुआ है।

'जिंदगीनामा' उपन्यास के पहले भाग 'जिंदा रुख' शीर्षक और लेखिका द्वारा अपनी काव्यात्मक अभिव्यक्ति में प्रस्तुत 'जिंदा रुख' के प्रतीक से यह स्पष्ट है कि 'जिंदा रुख' पंजाब की साँझी जन संस्कृति का प्रतीक है जो 1947 तक अपने पूरे खूबसूरत रूप में खिला, फला और फूला हुआ था, जो अपने नीचे बसे लोगों की सुरक्षा या उनके लिए ठंडी छाँह था। लगभग 1907 से 1914-15 तक पंजाब का 'जिंदा रुख' सुरक्षित था, जिसकी एक झलक उपन्यास में प्रस्तुत गुजरात जिले के डेरा जट्टा गांव के अविरल जीवन-प्रवाह के रूप में प्रस्तुत हुई है। वास्तव में 'जिंदगीनामा' की अंतर्वस्तु जैसी व्यापक है उसे एक सीमित कथा के दायरे में बाँधकर प्रस्तुत करना कठिन व श्रमसाध्य लक्ष्य था जिसे लेखिका ने बांधने का पूरा प्रयास किया है। लेखिका ने इस कठिन व उलझे कथानक को इस संस्कृति-कथा को डेरा जट्टा गांव व गांव में भी शाहों के परिवार की कथा तक सीमित करने के रूप में साँझी संस्कृति का प्रतीकात्मक चित्र प्रस्तुत किया है। उपन्यास की कथा का आरंभ शरद पूर्णिमा की रात से करते हुए कथा के पूरे वर्ष के दौरान आने वाले सभी त्योहारों एवं ऋतुओं का वर्णन किया है।

'त्रिंजन' पंजाब का एक लोक त्योहार है जिसे बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। डेराजट्टा गांव में भी यह त्योहार बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। उपन्यास में शाह परिवार की मालकिन शाहनी इस अवसर पर अपने पसार में चरखा बैठाती है। गांव की सभी लड़कियाँ उसके साथ चरखा चलाती हैं। बीच-बीच में हँसी-ठहाकों से पूरा वातावरण रससिक्त हो जाता है। इस अवसर पर हीर-रांझा की प्रेम-कहानी सुनाई जाती है और सभी स्त्रियाँ उस प्रेममयी आख्यान को सुनकर भावुक हो उठती हैं। चाची महरी प्रेम को रब्ब की कृपा मानती है। वह कहती है, "चुप री, छोटा मुँह बड़ी बात! रब्ब रखवाला न हो आशिकों का तो मुहब्बतें तोड़ नहीं चढ़तीं। चनाब पार करनेवाले घड़े ही गल जाते हैं।"[1]

ISSN 2582-5429
AMRJ
Akshara Multidisciplinary Research Journal
Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
April-June 2021 Vol.02 Issue VI SJIF Impact- 5.54

हीर-रांझा की प्रेम कहानी के अलावा लड़कियाँ घोड़ी (विवाह के अवसर पर गाया जाने वाला गीत) गाती हैं और युद्ध में गए अपने वीरों की खैर मनाती हैं। 'त्रिंजन' की तरह 'लोहड़ी' भी पंजाब की लोक-संस्कृति का एक मुख्य हिस्सा है। इस अवसर पर गांव भर की बालटोलियाँ ऐसे घरों में जाकर माँगते हैं जहाँ नई-नई शादियाँ हुई हों, जिस घर झोली में लाल पड़े हों। वे जाकर पुकारते हैं— "भरी मिले भई भरी मिले / लाडलों की भरी मिले।"[2]

शानों की माँ बच्चों के इस हुड़दंग पर खींझती है और अपनी बेटी शानो को फटकारती है। बच्चे हँसकर गाने लगते हैं- "आएगी भई आएगी / इस घर लोहड़ी आएगी / आनेवाली लोहड़ी पर / शानो की माँ गोदी में / बच्चड़ा खिलाएगी।"[3]

बच्चों की इस दुआ से शानो की माँ का तेवर मीठे स्नेह में घुल जाता है और वह खुशी -खुशी उनकी झोलियाँ मक्के के दानों से भर देती है। समाज में बेटे की महत्वाकांक्षा रहती है। लेखिका ने लोहड़ी के इस प्रसंग में समाज एवं स्त्री-मनोविज्ञान को भी प्रस्तुत किया है। सभी मिलकर लोहड़ी जलाते हैं ओर ढोल की थाप पर पूरा गांव थिरकने लगता है।

'लोहड़ी' की तरह 'बैसाखी' का त्योहार भी पंजाब की लोक-संस्कृति का हिस्सा है। यह त्योहार फसल पकने के बाद मनाई जाती है। लेखिका ने प्रकृति की इस मनमोहक छवि का चित्रण करते हुए लिखा है--"पीपल, बोढ़, कीकर, फलाँ और नीम के सजरे सोहले पात धूप में यूँ चमके-दमके ज्यों दूध-पीते बच्चों के मुखड़े टहनियों पर जा लगे हों। अलग-अलग कसारोंवाली पकी फसले बहुरंगी झलक मारे ऐसी कि हल्के-गूढ़े रंग की ओढ़नियाँ धूप में सूखने फैली हों।"[4] फसलें कटकर शाहों की कोठरी में पहुँच जाती हैं और शाह जाटों की शानदार दावत देकर उनके असंतोष को दबाने का प्रयास करते हैं। भोले-भाले जाट तृप्त हो-होकर खाते हैं ओर शाहों की दरियादिली का बखान करते हैं। कृष्णा सोबती ने पूरे उपन्यस में छोटे-छोटे प्रसंगों द्वारा पंजाब की सांस्कृतिक आर्थिक अवस्था की सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों पहलुओं को चित्रित किया है।

मकर संक्रांति के अवसर पर कुम्हारों के घर से मटके पर स्त्रियाँ मौलियाँ बाँध उसमें गुड़आटा और कवड़ियाँ रख ब्राह्मणों को दान करती हैं तथा अपने परिवार की मंगलकामना करती हैं --"जय धम्मदेव! तेरी करणी से किरणों के ताप-तपा आँख शीतल कर देवता! जल से तृप्ति पा और तृप्ति दे! भरे-घटक, तेरे चरणों में त्रिहाई सृष्टि जल-बुंदियों से शांत कर।"[5]

स्थानीय उत्सवों के अलावा पंजाब के गांवों में नवरात्रि दिवाली एवं पितरपक्ष जैसे त्योहार भी मनाए जाते हैं। नवरात्र के शुभ अवसर पर गुसाईं जी पूरे गांववासियों के बीच धर्मआध्यात्म से पूर्ण शिव-पार्वती की कथा बाँचते हैं। पूरा जनसमाज मुग्ध हो जाता है। इसी अवसर पर गांव के वयोवृद्ध लाला बड्डे एवं बेबेनिक्के भी उपस्थित होते हैं। ये दोनों पूरे गांवसमाज में अपनी वयोवृद्धता एवं अनुभव के लिए सम्मान के पात्र हैं। गांव की सभी बहू-बेटियाँ बेबेनिक्के एवं बड्डे लाला को पैरीपौना करते हैं। वे सभी को आशीर्वाद देते हैं। कृष्णा सोबती ने पंजाब की इस लोक-संस्कृति की अनोखी छवि खींचकर बदलते बाजारवादी दौर में बुजुर्गों की उपेक्षा पर प्रश्न चिह्न लगाए हैं। भारतीय ग्रामों में निक्के एवं बड्डे लाला जैसे लोग सम्मान पाते हैं -- यही भारतीय संस्कृति की परंपरा है, जो हमें बुजुर्गों का पर्याप्त आदर-सम्मान करना सिखाती है। नवरात्रि की तरह दीवाली एवं पितरपक्ष का त्योहार भी धूमधाम से मनाया जाता है। पितरपक्ष के अवसर पर ब्राह्मणों को भोज खिलाकर अपने पितरों को संतुष्ट करते हैं। शाह ब्राह्मणों को भोज खिलाकर पानी का कलश उठाकर पितरों को विदा करती है। सतियोवाले तालाब के पास पहुँच हाथ जोड़, सीस नवाते हुए कहती है --"पितर देवो, अब बैकुंठों को प्रस्तान करो। अपने मुण्ड-परिवार से तृप्त हो स्वर्गलोग को पधारो। आपजी के थान-घर-परिवार इसी तरह अपनी जगह स्थित सलामत रहे।"[6]

कृष्णा सोबती ने इस उपन्यास में पंजाब की जिस लोक-संस्कृति को लिपिबद्ध किया है वह किसी विशेष जाति का न होकर अविभाजित पंजाब की साँझी जन-संस्कृति है, जिसमें जाट-खत्रियों के साथ मुसलमान भी मिली-जुली संस्कृति के सहभागी हैं। लेखिका ने उपन्यास में पंजाबी त्योहारों के अलावा ईद का भी वर्णन किया है। दशहरा और ईद की तिथियाँ आगे-पीछे ही पड़ी पर सबके दिलों में उत्सवों का हुलास भर गया। बाजारों में रौनकें सजने लगीं। कोई छपीला खद्दर ले, कोई छब्बी की मलमल दुप्पटे। खुले कोठों पर कँवारी लड़कियाँ रंगरेजन बन कुंडों में रंग घोल-घोल ओढ़नियाँ रंगने लगीं। उपन्यास का एक अंश द्रष्टव्य है

"इधर रंग-बिरंगी ओढ़नियाँ हवा में सूखने लगीं, उधर लड़कियों को हाँके पड़ने लगीं --अरी आओ री, दूजे कामों में भी हाथ बँआओ। रंगली चूनरें खाने-पीने के काम न आयेंगी।"[7]

ओढ़नियाँ रंगने के बाद सेवइयाँ पेरने की होड़ लग जाती है। फिर बनाई हुई सेवइयों को तंदूर में तला जाता है। पूरा गांव ईद की सेवइयों की मिठास से भर जाता है।

इन उत्सव-त्योहारों के अलावा कृष्णा सोबती ने जन्म एवं विवाह जैसे सामाजिक आयोजनों को भी मुग्धता के साथ वर्णन किया है। शाह की पत्नी को बहुत समय तक मातृत्व का सुख नहीं मिलता। चाची महरी शाहनी की कोख हरी होने के लिए बाबा फरीद की मजार पर मन्नत माँगती है और शाहनी गर्भवती हो जाती है। पुत्र लाली के जन्म के बाद शाहों की हवेली पर रौनकें लग जाती हैं। इस अवसर पर गांव की बड़ी बुढ़ियाँ शाहनी को आशीष देती हैं। ननदें भतीजे को सिदका उतारती हैं। ऐसे अवसर पर दाई, मिरासने अपना-अपना नेग वसूलती है। इस शुभ घड़ी पर सोहना-सुहावना सुर गूँजने लगता है-

"सूहे जोड़े पहन सुहागनों
मोजियों मांग सजावनी
बैठ अँगना गोद भरावनी
मेरे लाल जियो
लख साल जियो।"[8]

जन्मोत्सव की इन रीति-रिवाजों के साथ ही साथ गांव में शादी की शहनाइयाँ भी गूँजती हैं। ढ़ोलकों की थाप पर सुहागिने घोड़ी गाती हैं, उबटन मलती हैं एवं हँसी-मजाक की हल्की फुहारों के बीच बेटी सासरे के लिए जब विदा होती है तब अँखिया भीग जाती है। शादी के उत्सवों पर मिरास बारातियों के शान-शौकत का बखान करता है --"ओ सुनो लोको/राजों की चढ़तले/ सजा के लाए बारात/दो सौ घोड़ों की अपना माड़ा-सा पिंड कैसे करे खातिरे शाही पुरोहनो की।"[9] अपना बखान सुन बाराती न केवल खुश होते हैं बल्कि उसे इनाम भी देते हैं।

पंजाब के जनमानस में बाबा फरीद, शेख सद्दो एवं बुल्लेशाह ख्वाजा खिजर जैसं संत फकीरों का यश बसा हुआ है। वे कभी इनसे अपनी मुरादें माँगते हैं तो कभी इन्हें याद करते हुए सुफीयाना रंग में रंग जाते हैं। शेरे बुल्लेशाह का गीत झूमकर गाता है

"हिंदून नाहीं मुसलमान
बैठिए त्रिंजन तज अभिमान
सुन्नी न नाही हम शिया
सुलह कुल का मार्ग लिया।"[10]

पंजाब की इन बरकतों का सेहरा दरिया चनाब और बुल्लेशाह जैसे पीरों की मानी जाती है। ये फकीर पंजाब की अटूट साँझी-संस्कृति के परिचायक हैं। पंजाब के इस समाज में जहाँ एक ओर सूफ़ीसंत फकीरों से अपने जीन की मंगल कामना की जाती है, वहीं दूसरी ओर स्त्री-समाज में टोने-टोटके का भी प्रचलन है, जो आम गांवों में देखा जाता है। डेराजट्टा गांव भी इस विशेषता को लिए हुए है। चूँकी पुरुष प्रधान संस्कृति में स्त्री सदा स्वयं के अस्तित्व के लिए असुरक्षित रहती है। अगर पुरुष किसी पर-स्त्री का गमन करता है तो इसके पीछे पुरुष का कसूर न ठहराकर इसे जादू-टोने का असर मान कर उसकी गलतियों पर पर्दा डालने की कोशिश की जाती है। उपन्यास में नच्छत्र कौर, माँबीबी, भोली जैसी स्त्री सौत पीड़ा से त्रस्त है। माँबीबी का पति इलाही वेश्या पर आसक्त है किंतु वहाँ से ठुकराए जाने पर वह दुबारा माँबीबी के पास लौटता है और बड़ी-बूढ़ी उसे टोना के जाल से मुक्त करने के लिए पानी की कनाली को भरकर उसे चाकू से काटती हैं - "ईची मीची को को खाय / कंजरी भड़वी जहन्नुम जाय।"[11]

इसी प्रकार स्त्री समाज में और भी कई तरह के टोने-टोटके एवं विश्वास प्रचलित हैं। शहनी दीया जलाकर प्रार्थना करती है –"दीवा जले दुश्मन टले रिजक का छींटा अंदर पड़े दीपक तेल बिछुड़े मेल।"[12] वह संध्या जला परिवार की मंगल कामना करती है।

'जिंदगीनामा' के मूल तथ्य पर विचार करते हुए परमानंद श्रीवास्तव लिखते हैं--"जिंदगीनामा में वर्णन और बिंब का रचाव एक पूरे अंचल की जीवन-पद्धति, लोक-रीति, मानवीय संबंध राग और आसक्ति को प्रत्यक्ष करने वाला है। एक अंचल की कथा को जगह-जगह सृष्टि-कथा के अभिप्राय से जोड़ने की युक्ति अकारण नहीं है। स्त्री-पुरुष, सृष्टि-रुख, भू-लोक-, आकाश-अग्नि लोक सामान्य जीवन व्यवहार में निहित किसी गहरे जीवन-मर्म की पहचान अंतर्दृष्टि के अभाव में असंभव है।"[13]

कृष्णा सोबती ने पूरे उपन्यास में मानवीय संबंध के राग-विराग को एक व्यापक संवेदनात्मक धरातल पर प्रस्तुत किया है। डेराजट्टा गांव खेतीहर किसानों का गांव है। समग्र उपन्यास में कृषक संस्कृति की सुंदर छवि यदाकदा प्रस्तुत की गई है। किसान खेती के लिए मेघों पर आश्रित हैं। जेठ की गर्मी में किसान बेहाल हैं। वे प्यासी आँखों से मेघ का इंतजार करते हैं। किसानों के साथ

ISSN 2582-5429
Akshara Multidisciplinary Research Journal
Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
April-June 2021 Vol.02 Issue VI SJIF Impact- 5.54

छोटे बच्चे भी झूम-झूमकर मेघों को बरसने की पुकार लगाते हैं - "औलिया मौलिया मेंह बरसा / अपनी कोठी दाने पा / चिड़ियों के मुँह पानी पा/ औलिया मौलिया मेंह बरसा।"[14]

किसान मेह की फुहारों के लिए व्याकुल हैं पर रब्ब से इतना ही मेह चाहते हैं कि फसल ठीक रहे वरना फिर खेती को नुकसान हो जाता है। इसके साथ ही नटों-बाजीगरों का खेल भी जीवन में रंग भर देता है।

पंजाब वीरों की भूमि है। डेराजट्टा गांव के प्रत्येक घर से कम से कम एक व्यक्ति फौज में है। युद्धभूमि में स्त्रियाँ अपने पति और वीरों को सजा-सजाकर भेजती है। उनके रणभूमि पर चले जाने से युद्धगान शुरू होता है -- "मिट्ठड़ी के /महिमा ओ /तेरे माथे पे जीतों के / सेहरे बँधे। मोती हीरे/ नगीनों से/ताजे लल्ला/तेरे सेहरे गूँथे।"[15] वे वीरों को युद्धभूमि से जीतकर लौट आने की कामना करती हैं। उपन्यास के केंद्र में बँटवारे की ट्रेजडी मौजूद है, परंतु जीवन के मर्मांतक त्रासदी को भी लेखिका ने हँसी-मजाक के खिलंदड़े अंदाज में पेश किया है। जीवन की छोटी से छोटी खुशी को बड़े उत्सव की तरह मनाना और विकराल दुर्घटनाओं को बेफिक्र होकर उड़ा देना पंजाबियत की पहचान है। हेमंत कुकरेती ने लिखा है--"इस उपन्यास में पंजाबी लोकमानस अपनी सांस्कृतिक विरासत सहित उभरा है। उपन्यास में व्यक्त पाँच नदियों की धरती के मेहनतकश लोगों के त्योहार और आखिर तक हार न मानने का वीरभाव सम्मोहित करता है।"[16]

'जिंदगीनामा' एक तरह से परिवेश प्रधान आंचलिक उपन्यास भी कहा जा सकता है तथापि इस उपन्यास के सृजन में लेखिका की विश्व-दृष्टि या जीवन-दृष्टि की बहुत बड़ी भूमिका है। अपने सहज रूप में 'जिंदगीनामा' उपन्यास में कृष्णा सोबती की मानवीय जीवन-दृष्टि आरंभ से अंत तक व्याप्त है। इस मानवीय दृष्टि में सांझी पंजाबी संस्कृति की विशिष्ट विश्व दृष्टि भी अभिन्न रूप में शामिल है।

संदर्भ सूची

1. सोबती कृष्णा, जिंदगीनामा, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 8, नेताजी सुभास मार्ग, नयी दिल्ली-110001, प्रथम संस्करण-1979, पृष्ठ संख्या —46
2. वही, पृ. 49
3. वही, पृ. 50
4. वही, पृ. 99
5. वही, पृ. 323
6. वही, पृ. 288
7. वही, पृ. 86
8. वही, पृ. 157
9. वही, पृ. 257
10. वही, पृ. 277
11. वही, पृ. 258
12. वही, पृ. 72
13. श्रीवास्तव परमानंद, उपन्यास का पुनर्जन्म, वाणी प्रकाशन, 4695, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002, संस्करण : 2015, पृ. 88
14. सोबती कृष्णा, जिंदगीनामा, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 8, नेताजी सुभास मार्ग, नयी दिल्ली-110001, प्रथम संस्करण-1979, पृ. 278
15. वही, पृ. 347
16. कुकरेती हेमंत, हिंदी उपन्यास नया पाठ :, वाणी प्रकाशन, 4695, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002, संस्करण : 2015, पृ. 118